वैचारिक नियंत्रकों से निपटना

यह आलेख सामान्य अध्ययन प्रश्न-II (शासन व्यवस्था) से संबंधित है।

द हिन्दू

लेखक-गौतम भाटिया (अधिवक्ता, दिल्ली)

14 फरवरी, 2019

"यह महत्वपूर्ण है कि अदालतें शहरी नक्सलियों और देश-विरोधी बहस से दूर रहें।"

5 फरवरी को पंजाब में एक अतिरिक्त सत्र के न्यायाधीश ने तीन युवकों को उम्रकैद की सजा सुनाई। अरविंदर सिंह, सुरजीत सिंह और रणजीत सिंह को 'भारत सरकार के खिलाफ युद्ध छेड़ने' से संबंधित भारतीय दंड संहिता के एक कम चर्चा में रहने वाले प्रावधान के तहत दोषी ठहराया गया है।

अब सवाल यह है कि इन तीन युवकों ने आखिर किस जघन्य तरीके से सरकार के खिलाफ युद्ध छेड़ने का अपराध किया था, जिसके कारण इन्हें आजीवन कारावास की सजा सुनाई गयी? 64-पृष्ठ लंबे निर्णय के एक अवलोकन से पता चलता है कि इन्होंने न तो कोई शारीरिक हिंसा की थी और न ही किसी को किसी भी तरह से नुकसान पहुँचाया था, फिर भी इन्हें ऐसी सजा सुनाई गयी। इसके अलावा, इनके पास कोई भी हथियारों का जखीरा बरामद नहीं हुआ। वे किसी भी विशिष्ट आतंकवादी हमले की योजना नहीं बना रहे थे और न ही वे ऐसा करते हुए पकड़े गये थे। अब जानते हैं कि इन्होंने ऐसा क्या किया था जिसके कारण इन्हें गिरफ्तार किया गया। इन युवकों को खालिस्तान का समर्थन करने वाले लेखों के साथ पकड़ा गया, खालिस्तान समर्थन वाले कुछ पोस्टर थे और कुछ फेसबुक पोस्ट थे (जिसमें उन्होंने क्या पोस्ट किया था वो मालूम नहीं)।

इस मामले में सारे सबूतों को देखने के बाद यह स्पष्ट है कि अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश का फैसला अनुचित है और इसे बदला जाना चाहिए। इसके अलावा, उच्च न्यायालयों को न केवल यह समझना चाहिए कि यह निर्णय वस्तुतः त्रुटिपूर्ण है, बल्कि यह भी समझना चाहिए कि यह न्यायपालिका के लिए एक खतरनाक क्षण का प्रतिनिधित्व करता है। गौरतलब है कि हाल के दिनों में यह पहला अवसर नहीं है जब किसी न्यायालय ने एक अस्पष्ट राष्ट्रवादी बयानबाजी के आधार पर संवैधानिक मूल्यों को नजरअंदाज किया हो और इस संदर्भ में, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश का निर्णय एक प्रवृत्ति की शुरुआत को चिह्नित करता है, जिसे यदि अनियंत्रित छोड़ दिया जाए, तो यह हमारी सबसे अधिक उदार स्वतंत्रता को नष्ट कर सकता है।

भाषण और संघ

पहले और सबसे भयावह निर्णय का पहलू संविधान के लिए इसकी स्पष्ट अवहेलना है। संविधान के मौलिक अधिकार अध्याय के केंद्र में अनुच्छेद-19 स्थित है, जो अन्य बातों के अलावा, अभिव्यक्त करने और जुड़ने या संघ बनाने की स्वतंत्रता की गारंटी देता है। बेशक, राज्य इन मूलभूत स्वतंत्रताओं पर, राज्य की सुरक्षा के लिए 'उचित प्रतिबंध' लगा सकता है।

पाँच दशकों से अधिक सावधानीपूर्वक निर्णयों की एक श्रृंखला में, सर्वोच्च न्यायालय ने उन सटीक परिस्थितियों को स्पष्ट किया है, जिनके तहत भाषण या संघ बनाने की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाना 'उचित' है। 2015 के श्रेया सिंघल मामले में एक प्रसिद्ध फैसले के बाद, जिसमें सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम की धारा-66A को हटा दिया गया था, कानून की स्थिति और भी स्पष्ट हो गई कि भाषण की स्वतंत्रता को केवल तभी प्रतिबंधित किया जा सकता है, जब यह हिंसा को भड़काने के लिए उपयोग में लाया जा रहा हो।

यह न केवल सर्वोच्च न्यायालय के न्यायशास्त्र के अनुरूप है, बल्कि नागरिक स्वतंत्रता की एक आदरणीय भारतीय परंपरा को भी दर्शाता है। 1920 के दशक की शुरुआत में, महात्मा गांधी ने लिखा था कि 'संघ बनाने की स्वतंत्रता वास्तव में तब उचित प्रतीत होता है जब लोग एक जगह जमा हो और उन्हें गिरफ्तार ना किया जाये, चाहे वो क्रांतिकारी परियोजनाओं पर भी चर्चा क्यों न कर रहे हों और कहा कि राज्य के हस्तक्षेप का अधिकार क्रांति के वास्तविक प्रकोप से जुड़ी स्थितियों तक सीमित है।' यहाँ पर महात्मा गाँधी द्वारा दिए गये तर्क को इस तरह समझ सकते हैं कि एक बहुलवादी लोकतंत्र में, कोई भी विचार स्वयं को सार्वभौमिक सत्य के रूप में और जबरदस्ती के माध्यम से अपनी स्थिति को लागू कर सकता है।

2011 में तीन फैसलों में अर्थात् रनीफ, इंद्र दास, और अरूप भुयान मामलों में सुप्रीम कोर्ट ने यह स्पष्ट किया कि भड़काऊ भाषण की परीक्षा आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम (TADA) और गैरकानूनी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम (UAPA) के प्रावधानों के लिए समान रूप से लागू होती है।विशेष रूप से, अदालत ने आगाह किया कि इन विधियों के अस्पष्ट शब्दों वाले प्रावधानों को संकीर्ण और सटीक रूप से और संविधान के अनुसार पढ़ना होगा। इसलिए, उदाहरण के लिए, एक प्रतिबंधित संगठन की 'सदस्यता',जो टाडा और यूएपीए के तहत दंडनीय अपराध है, को 'सक्रिय सदस्यता' तक सीमित समझा जाएगा यानी हिंसा के लिए उकसाना। देखा जाये तो, रनीफ मामलें में, क्रांतिकारी लेख स्पष्ट रूप से दोषसिद्धि के लिए अपर्याप्त माना गया था, जिसे 5 फरवरी को

दिए गये अपने फैसले में अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा नजरअंदाज कर दिया गया है।

वास्तव में, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने न केवल गांधी, सर्वोच्च न्यायालय के भाषण और संघ बनाने की स्वतंत्रता और सुप्रीम कोर्ट के आतंकवाद विरोधी कानून की व्याख्या की उपेक्षा की, बल्कि ये खालिस्तानी समर्थित मुद्दों की भी अनदेखी करने में कामयाब रहे। बलवंत सिंह बनाम पंजाब राज्य (1995) मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने इंदिरा गांधी की हत्या के तुरंत बाद पंजाब में एक सिनेमा हॉल के बाहर खालिस्तान समर्थक नारे लगाने वाले दो लोगों के देशद्रोह के आरोपों को अलग रखा था। जहाँ एक तरफ सुप्रीम कोर्ट द्वारा ऐसी स्थिति को 'भड़काने' की सीमा को पूरा करने वाले कारक के रूप में अपर्याप्त माना गया था, वहीं दूसरी तरफ अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने यह दावा करने में कामयाब रहे कि फेसबुक पोस्ट 'प्रत्यक्ष उकसावे' को दर्शाता है।

न्यायिक निष्पक्षता

इस मामले में विचार करने के लिए एक और मुख्य बिंदु है। पिछले कुछ वर्षों में, एक बहस उत्पन्न हुई है, जो यह है कि विपक्षी विचारों के एक सेट को दूसरे रंग से रंगा जाये और वैसे लोग जो ऐसी विचारधारा को मानते हैं उनको सभ्य उपचार के अयोग्य माना जाये। इस बहस पर दो वाक्यांश हावी हैं: 'शहरी नक्सल' और 'राष्ट्र-विरोधी'।

न तो 'शहरी नक्सल' और न ही 'राष्ट्र-विरोधी' कानून द्वारा परिभाषित शब्द है। इन शर्तों का हिंसा के लिए उकसाने या सार्वजनिक अव्यवस्था पैदा करने से कोई लेना-देना नहीं है।

वास्तव में, यह महत्वपूर्ण है कि अदालतें, सबसे ऊपर, इस बहस से मुक्त रही हैं, क्योंकि ये अदालतें हैं जिन्हें उन व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा करने का काम सौंपा जाता है, जो वर्तमान में सत्ताधारी बहुमत द्वारा ध्वस्त और तिरस्कृत हैं।

हालांकि, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने इन विशिष्ट शब्दों में से किसी का भी उपयोग नहीं किया हैं, उनका संपूर्ण निर्णय इस शासी दर्शन का एक टुकड़ा है, जहां अनुमान, संघ और अंतर विरोध तर्कसंगत विश्लेषण का स्थान लेते हैं। इस संदर्भ में, इनका निर्णय दिल्ली उच्च न्यायालय के फैसले की याद दिलाता है, जिसमें कन्हैया कुमार को जमानत दी गई थी और वर्तमान में चल रहे भीमा कोरेगांव मामले में पुलिस प्रेस-कॉन्फ्रेंस जिसमें 'शहरीनक्सल' शब्द का प्रयोग किया गया था।

देखभाल का मामला

इस बात में कोई संदेह नहीं है कि अरविंदर सिंह, सुरजीत सिंह और रणजीत सिंह की उम्रकैद की सजा कानून की कसौटी पर खरी नहीं उतर सकती। हालांकि, जब एक अपीलीय न्यायालय ऐसे मुद्दे पर विचार करता है, तो उसे इसका ध्यान रखना चाहिए कि एक लोकतंत्र में लोगों को केवल किताबें पढ़ने, पोस्टर पेंट करने या फेसबुक पर पोस्ट करने के लिए जेल नहीं भेजा जा सकता। नागरिकों के जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता से जुड़े मामलों को सुनिश्चित करने के लिए अदालतों को यह विशेष ध्यान रखना चाहिए कि उन्हें बहकावे में आकर या संविधान की अखंडता को न भूल कर एक बेहतर शासन व्यवस्था स्थापित करनी है।

GS World टीम...

गैरकानूनी गतिविधियां (रोकथाम) अधिनियम, 1967

चर्चा में क्यों?

- हाल ही में भारत सरकार के गृह मंत्रालय ने खालिस्तान लिबरेशन फोर्स (केएलएफ) और तहरीक-उल-मुजाहदीन (TuM) नामक संगठनको आतंकी संगठन घोषित कर दिया है।
- इन्हें गैरकानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम (UAPA) की धारा 35 के तहत प्रतिबंधित कर दिया है।
- खालिस्तान लिबरेशन फोर्स (केएलएफ) संगठन 1986 में पंजाब को हिंसा के जरिए अलग राष्ट्र खालिस्तान बनाने के इरादे से बना था।
- तहरीक-उल-मुजाहदीन की स्थापना 1990 के दशक में हुई थी।?
- इस संगठन को पहली बार प्रतिबंधित किया गया है।
- इससे पहले बब्बर खालसा इंटरनेशनल, खालिस्तान कमांडो फोर्स, खालिस्तान जिंदाबाद फोर्स और इंटरनेशनल सिख यूथ फेडरेशन जैसे संगठन ही प्रतिबंधित किए गए हैं।

क्या है?

- यह कानून भारत में गैरकानूनी कार्य करने वाले संगठनों की कारगर रोकथाम के लिए बनाया गया था।
- इसका मुख्य उद्देश्य देश विरोधी गतिविधियों के लिए कानूनी शक्ति का प्रयोग करना है।
- इस अधिनियम के अनुसार यदि कोई राष्ट्रद्रोही आन्दोलन का समर्थन करता है अथवा किसी विदेशी देश द्वारा किये गये भारत के क्षेत्र पर दावे का समर्थन करता है तो वह अपराध माना जाएगा।
- यह 1967 में पारित हुआ था। बाद में यह पहले 2008 में और फिर 2012 में संशोधित हुआ था।

अधिनियम के कुछ विवादित प्रावधान

- इसमें आतंकवाद की जो परिभाषा दी गई है वह उतनी स्पष्ट नहीं है। इसलिए अहिंसक राजनैतिक गतिविधियाँ और राजनैतिक विरोध भी आतंकवाद की परिभाषा के अन्दर आ जाता है।
- यदि सरकार किसी संगठन को आतंकवादी बताते हुए उस पर प्रतिबंध लगा देती है तो ऐसे संगठन का सदस्य होना ही एक आपराधिक कृत्य हो जाता है।
- इस अधिनियम के अनुसार किसी को भी बिना आरोप-पत्र के 180 दिन बंदी बनाया जा सकता है और 30 दिनों की पुलिस कस्टडी ली जा सकती है।
- इसमें जमानत मिलने में कठिनाई होती है और अग्रिम जमानत का तो प्रश्न ही नहीं उठता।
- इसमें मात्र साक्ष्य के बल पर किसी अपराध को आतंकवादी अपराध मान लिया जाता है।
- इस अधिनियम के अन्दर विशेष न्यायालय बनाए जाते हैं जिनको बंद करने में सुनवाई करने का अधिकार होता है और जो गुप्त गवाहों का उपयोग भी कर सकते हैं।

संभावित प्रश्न (प्रारंभिक परीक्षा)

1. **निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए-**

   1. हाल ही में भारत सरकार के रक्षा मंत्रालय द्वारा तहरीक-उल-मुजाहद्दीन को आतंकी संगठन घोषित किया गया है।
   2. तहरीक-उल-मुजाहद्दीन संगठन को गैर कानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम की धारा-35 के तहत प्रतिबंधित किया गया है।

   उपर्युक्त में से कौन-सा/से कथन सत्य है/हैं?

   (a) केवल 1
   (b) केवल 2
   (c) 1 और 2 दोनों
   (d) न तो 1 और न ही 2

1. **Consider the following statements-**

   1. Tehreek-Ul-Mujahideen has been declared a terrorist organisation by the Ministry of Defence of Indian government.
   2. Tehreek-Ul-Mujahideen organistation has been banned under the section 35 Unlawful Activities (Prevention) Act.

   Which of the above statements is/are correct?

   (a) Only 1
   (b) Only 2
   (c) Both 1 and 2
   (d) Neither 1 nor 2

संभावित प्रश्न (मुख्य परीक्षा)

प्रश्नः हाल ही में 'वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा देश विरोधी विचारों के मध्य टकराव को लेकर न्यायालयों ने कुछ प्रतिगामी निर्णय दिये हैं। यह भारतीय लोकतंत्र के लिए किस प्रकार चिंताजनक है? चर्चा कीजिए।

Q. Recently, courts have given regressive judgement in the context of the tussel between the freedom of speech and expression and Anti-national ideologies. How is it a concern for Indian democracy? Discuss.

(250 Words)

नोट : 13 फरवरी को दिए गए प्रारंभिक परीक्षा (संभावित प्रश्न) का उत्तर 1(c) होगा।

Committed To Excellence